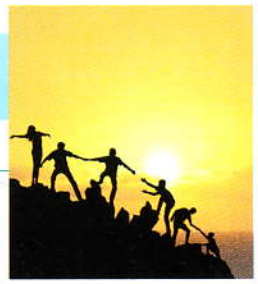

नए समाज की बुनियाद पंचायती राज

पार्थिव कुमार

पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद में कमजोर तबकों के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया है। इनमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को आबादी में उनके अनुपात के बराबर आरक्षण दिया गया है। इस आरक्षण के अंदर कम-से-कम एक तिहाई सीटें इन्हीं समुदायों की महिलाओं के लिए आरक्षित की गई हैं। अन्य पिछड़े तबकों के लिए आरक्षण के प्रतिशत का फैसला करने का अधिकार राज्यों को दिया गया है। पंचायती राज व्यवस्था के तीनों स्तरों पर कम-से-कम एक तिहाई सामान्य सीटें भी महिलाओं के लिए रखी गई हैं

देश में संविधान के 73वें संशोधन के जरिए लागू तीन स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था अवसरों की समानता और सत्ता के विकेंद्रीकरण के महात्मा गांधी के सपने को अमली जामा पहनाने का ठोस प्रयास है। इसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समेत हर तरह के भेदभावों को मिटाने तथा विकास कार्यक्रमों को बनाने और उन पर अमल में सभी तबकों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए समुचित प्रावधान किए गए हैं। लिहाजा यह व्यवस्था अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, महिलाओं और समाज के हाशिए पर खड़े अन्य सभी समुदायों के सशक्तीकरण में काफी मददगार साबित हो रही है।

'लोकतंत्र में सबसे कमजोर व्यक्ति को भी वही अवसर मिलने चाहिए जो सबलतम को मिले हुए हैं। भारत के सच्चे लोकतंत्र को केंद्र में बैठे बीस लोग नहीं चला सकते। इसमें गांव को इकाई माना जाएगा और इसका संचालन निचले स्तर से हर ग्रामवासी करेगा।'

- मोहनदास करमचंद गांधी

लोकतंत्र को शासन का सबसे अच्छा स्वरूप इसलिए माना जाता है कि इसमें राजनीतिक फैसलों की प्रक्रिया में सभी नागरिक सीधे या परोक्ष तौर पर शामिल रहते हैं। लेकिन आजादी के समय भारतीय समाज जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र, संस्कृति, परंपरा और रीति-रिवाज के आधार पर बुरी तरह बंटा हुआ था। समूची व्यवस्था को गिनती के रसूखदार लोगों ने अपनी मुट्ठी में कैद कर रखा था। शिक्षा, राजनीतिक चेतना और धन के अभाव में कमजोर तबकों के लोग सियासत से लगभग पूरी तरह अलग थे। इन तबकों में से जो कुछेक लोग अपने हकों के लिए सामने आते उन्हें ऊंची जातियों और संपन्न वर्गों के जुल्मों का सामना करना पड़ता था। हमारे नेताओं को मालूम था कि इस तरह के भेदभाव के माहौल में एक मजबूत देश का निर्माण नहीं किया जा सकता। एक जीवंत लोकतंत्र के लिए समाज में बदलाव जरूरी था और देश के संविधान को इस दिशा में पहला मजबूत कदम माना जा सकता है।

26 जनवरी, 1950 को लागू किए गए भारत के संविधान की प्रस्तावना में देश के सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय दिलाने का संकल्प जाहिर किया गया है। इसमें हर व्यक्ति के लिए विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता की बात कही गई है। साथ ही, सभी नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के प्रतिष्ठा और अवसरों की समानता मुहैया कराने का ठोस इरादा भी इसमें व्यक्त किया गया है। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए विभिन्न सरकारों ने तीन तरह के कदम उठाए हैं। इनमें से पहला कदम महिलाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े तबकों के खिलाफ भेदभाव को खत्म

लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं और सामाजिक मुद्दों पर निरन्तर लेखन करते रहे हैं। ईमेल: kr.parthiv@gmail.com

करने के लिए कानून बनाना और उन्हें लागू करना है। दूसरे, इन समुदायों की बेहतरी के लिए विभिन्न योजनाएं और कार्यक्रम चलाए गए तथा उन्हें शिक्षा और सरकारी सेवाओं में आरक्षण दिया गया। इसके अलावा वंचितों को राजनीति में पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने के मकसद से विधायिका में उनके लिए सीटें आरक्षित रखने का प्रावधान किया गया। लेकिन पंचायती राज कानून निस्संदेह सत्ता के विकेंद्रीकरण का प्रयास स्वतंत्रता के बाद का सबसे क्रांतिकारी कदम है।

73वें संशोधन के जरिए संविधान में 'पंचायत' शीर्षक से एक नया खंड नौ जोड़ा गया। इसके साथ ही 11वीं अनुसूची भी बनाई गई जिसमें पंचायतों के कामकाज के दायरे में आने वाले 29 विषयों को शामिल किया गया। इस संशोधन के जरिए राज्य के नीति निर्धारक सिद्धांतों के अनुच्छेद 40 को लागू किया गया। इस अनुच्छेद में कहा गया है कि सरकार ग्राम पंचायतों के गठन के लिए कदम उठाएगी और उन्हें स्वशासन की इकाइयों के रूप में काम करने के वास्ते जरूरी शक्तियां और अधिकार मुहैया कराएगी।

पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद में कमजोर तबकों के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया है। इनमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को आबादी में उनके अनुपात के बराबर आरक्षण दिया गया है। इस आरक्षण के अंदर कम-से-कम एक तिहाई सीटें इन्हीं समुदायों की महिलाओं के लिए आरक्षित की गई हैं। अन्य पिछड़े तबकों के लिए आरक्षण के प्रतिशत का फैसला करने का अधिकार राज्यों को दिया गया है। पंचायती राज व्यवस्था के तीनों स्तरों पर कम-से-कम एक तिहाई सामान्य सीटें भी महिलाओं के लिए रखी गई हैं। लेकिन देश के कुल 29 में से 17 राज्य इससे आगे बढ़ कर पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशत सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित कर चुके हैं। उनके इस फैसले से महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण को काफी बल मिला है।

संविधान के खंड नौ को अनुसूचित जनजाति इलाकों में लागू करने के लिए पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) कानून को 1996 में लागू किया गया। इस कानून के मुताबिक पांचवीं अनुसूची के अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशत सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित की गईं। इसमें व्यवस्था की गई कि तीनों स्तरों पर पंचायती राज संस्था का प्रमुख अनुसूचित जनजाति का होगा। इसके अलावा अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायत के बारे में हर कानून स्थानीय समुदाय की परंपराओं, सामाजिक और धार्मिक प्रथाओं तथा पारंपरिक प्रबंधन प्रणालियों के अनुरूप बनाया जाएगा।

भारत अब भी गांवों का देश है जहां हर 10 में से सात नागरिक ग्रामीण इलाकों में ही रहते हैं। संविधान के 73वें संशोधन का ग्रामीण भारत में सकारात्मक असर साफ देखा जा सकता है। ज्यादातर राज्यों में पंचायत के चुनाव नियमित तौर पर हो रहे हैं जिनसे ग्रामीण क्षेत्रों के शक्ति संतुलन में बदलाव आया है। ढाई लाख से ज्यादा ग्राम पंचायतों, 6000 पंचायत समितियों और 500 जिला परिषदों के गठन से देश में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का विस्तार हुआ है।

73वें संशोधन के जरिए संविधान में 'पंचायत' शीर्षक से एक नया खंड नौ जोड़ा गया। इसके साथ ही 11वीं अनुसूची भी बनाई गई जिसमें पंचायतों के कामकाज के दायरे में आने वाले 29 विषयों को शामिल किया गया। इस संशोधन के जरिए राज्य के नीति निर्धारक सिद्धांतों के अनुच्छेद 40 को लागू किया गया। इस अनुच्छेद में कहा गया है कि सरकार ग्राम पंचायतों के गठन के लिए कदम उठाएगी और उन्हें स्वशासन की इकाइयों के रूप में काम करने के वास्ते जरूरी शक्तियां और अधिकार मुहैया कराएगी।

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान के 2013-14 के आंकड़ों के अनुसार हर पांच साल पर 31.5 लाख से ज्यादा जनप्रतिनिधि पंचायतों के स्तर पर चुने जा रहे हैं। इनमें से 13.5 लाख से अधिक महिलाएं तथा लगभग नौ लाख अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्य हैं। पंचायतों में 43 प्रतिशत महिलाओं तथा 15 प्रतिशत अनुसूचित जातियों और 19-28 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधियों के निर्वाचन को एक तरह से लोकतांत्रिक क्रांति ही माना जा सकता है।

देश में पंचायतों में महिलाओं की सबसे ज्यादा भागीदारी हिमाचल प्रदेश (52.6 प्रतिशत) और मणिपुर (51 प्रतिशत) में है। पश्चिम बंगाल में 41.67 प्रतिशत, त्रिपुरा में 27.11 प्रतिशत और पंजाब में 25.79 प्रतिशत पंचायत सीटों पर अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि हैं। पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण ने महिलाओं और अनुसूचित जातियों को राजनीतिक भागीदारी और फैसले करने की प्रक्रिया में हिस्सेदारी का अवसर दिलाया है। इन संस्थाओं से कमजोर तबकों की जिंदगियों में आए उत्साहवर्द्धक बदलावों में से कुछ इस प्रकार हैं-

1. सामाजिक सम्मान: देश के ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत तौर पर अनुसूचित जातियों की बस्तियां गांव के बाहर हुआ करती थीं। छुआछूत की कुप्रथा के पीड़ित इन अनुसूचित जातियों को दोयम दर्जे का नागरिक माना जाता था। ऊंची जातियों के प्रभावशाली लोग इनका तरह-तरह से शोषण और दमन किया करते थे। समाज में अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं की हालत भी इनसे ज्यादा बेहतर नहीं थी। पंचायती राज व्यवस्था में आरक्षण ने इन तबकों को राजनीतिक अधिकार संपन्न बनाया है। अब अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों,

महिलाएं और अन्य पिछड़े समुदायों के लोग समाज के प्रभावशाली तबकों के साथ बैठ कर गांव, तहसील और जिले के विकास के लिए योजनाएं और कार्यक्रम बना रहे हैं। इससे उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा में इजाफा हुआ है। आपसी संपर्क की बदौलत उनके बारे में प्रभावशाली तबकों के नजरिए में भी बदलाव आ रहा है। जनप्रतिनिधि चुनी गईं महिलाओं को समाज के अलावा अपने परिवार में भी पहले से अधिक सम्मान और अधिकार मिल रहे हैं।

2. आर्थिक बेहतरी: देखा गया है कि कमजोर तबकों के जनप्रतिनिधि उस तरह की योजनाओं और कार्यक्रमों को तरजीह देते हैं जिनसे इन समुदायों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो। इनमें कृषि, भूमि सुधार, पशु और मछली पालन, सामाजिक वानिकी, गरीबी उन्मूलन, शिक्षा, खादी और ग्रामोद्योग तथा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के कल्याण से संबंधित कार्यक्रम प्रमुख हैं। इन कार्यक्रमों पर बेहतर ढंग से अमल से कमजोर तबकों की वित्तीय हालत में सुधार आ रहा है।

3. राजनीतिक सशक्तीकरण: कुछ दशक पहले तक समाज के कमजोर तबकों का राजनीति में दखल बेहद कम था। चुनाव लड़ना तो दूर की बात, अक्सर उन्हें वोट डालने से भी रोका जाता था। समाज पर वर्चस्व रखने वाली ताकतें उनका सियासी इस्तेमाल करती थीं। पंचायती राज व्यवस्था ने उनकी राजनीतिक आकांक्षाओं को जुबान देकर उन्हें सियासी तौर पर मजबूत बनाया है। अब वे उन ताकतों को चुनौती देने की स्थिति में आ गए हैं जो समाज में अपने दबदबे का इस्तेमाल कर उन्हें राजनीति में सक्रिय भागीदारी निभाने से रोक रही थीं।

4. आत्मविश्वास में बढ़ोतरी: योजनाओं और कार्यक्रमों को तैयार और लागू करने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों और महिलाओं में एक नया आत्मविश्वास पैदा किया है। सदियों की उपेक्षा और प्रताड़ना ने उनके अंदर यह धारणा भर दी थी कि वे अपने फैसले खुद करने की काबिलियत नहीं रखते। लिहाजा वे अपनी छोटी-छोटी समस्याओं तक के हल के लिए प्रभावशाली तबकों पर निर्भर थे। गांव के दबंग लोग उनकी इस कमजोरी का फायदा उठा कर उन्हें उनके अधिकारों से महरूम रखते थे। लेकिन ग्रामीण प्रशासन में भागीदारी ने इन तबकों के हौसलों को मजबूती दी है। नतीजतन वे खुद को विकास के लाभों से दूर रखे जाने की साजिशों को समझ कर उनका विरोध भी करने लगे हैं।

लेकिन यह कहना पूरी तरह वाजिब नहीं होगा कि पंचायती राज व्यवस्था के तहत सत्ता के विकेंद्रीकरण से गांवों की तस्वीर एकदम बदल गई है। वास्तव में अनुसूचित जातियों और जनजातियों और महिलाओं को अपने एक नए और सुनहरे भविष्य की मंजिल को हासिल करने की राह में तरह-तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है। समाज के सामंती और पितृसत्तात्मक सोच के प्रभावशाली लोग जबरन और धोखे से हासिल अपने वर्चस्व को आसानी से छोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं। चुनाव लड़ रहे कमजोर तबकों के लोगों को कई दफा इन विकृत सोच वाली शक्तियों के टकराव, हेराफेरी, शारीरिक हिंसा और उपहास का सामना करना पड़ता है। नीचे कुछ ऐसी समस्याओं का जिक्र किया गया है जो पंचायती राज संस्थाओं को सही मायनों में ग्रामीणों का प्रतिनिधि बनने से रोकती हैं।

देश में पंचायती राज संस्थाओं को सांवैधानिक दर्जा दिया जाना मौजूदा समय का सबसे बड़ा सामाजिक प्रयोग है। ऐसी संस्थाएं अपनी तमाम ताकतों और कमजोरियों के साथ बराबरी पर आधारित एक नई सामाजिक व्यवस्था के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान कर रही हैं। इन्होंने बुनियादी स्तर तक योजनाओं और कार्यक्रमों के निर्माण और उन पर अमल के लिए मंच मुहैया कराया है।

1. खास तबकों का वर्चस्व: ग्रामीण समाज में जिन ऊंची जातियों का सदियों से प्रभाव रहा है वे अपने विशेषाधिकारों को किसी भी कीमत पर छोड़ना नहीं चाहतीं। इन जातियों के सदस्य लोकतांत्रिक संस्थाओं पर अपने कब्जे को अपनी प्रतिष्ठा का आधार मानते हैं। सामाजिक और आर्थिक तौर पर मजबूत इन जातियों के लोगों को भय रहता है कि शोषित तबकों के प्रतिनिधि पंचायत का इस्तेमाल उनसे अपने अधिकारों को हासिल करने के लिए करेंगे। प्रभावशाली तबकों के प्रतिनिधि अक्सर पंचायत के कामकाज में अनुसूचित जातियों के पदाधिकारियों के साथ सहयोग नहीं करते। उन्हें पंचायत के दस्तावेजों और बही-खातों को देखने से रोका जाता है। कई मामलों में तो अनुसूचित जातियों के सदस्यों को पंचायत के भवन में घुसने, उसकी कार्यवाही में हिस्सा लेने और कुर्सी पर बैठने तक से रोका गया है।

2. शिक्षा की कमी: ऊंची जातियों के पुरुषों की तुलना में महिलाओं, अनुसूचित जातियों व जनजातियों में शिक्षा का प्रसार कम रहा है। बेशक कमजोर तबकों के प्रतिनिधि अपने अनुभव की बदौलत गांवों की समस्याओं और जरूरतों को अच्छी तरह समझते हैं। लेकिन शिक्षित नहीं होने के कारण उन्हें कार्यक्रम बनाने और लागू करने में दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। अक्सर वे दस्तावेजों को पढ़े बिना ही उन पर दस्तखत कर देते हैं। कई दफा तो कोष के उपयोग की विस्तृत जानकारी दिए बिना ही उनसे कोरे चेक पर हस्ताक्षर करा लिए जाते हैं।

3. प्रशासनिक दक्षता का अभाव: पारंपरिक तौर पर समाज में महिलाओं और अनुसूचित जातियों व जनजातियों का दर्जा शासित का रहा है। अंग्रेजों के जमाने से ही ताकतवर ऊंची जातियों के लोग उन पर राज करते रहे हैं। ऐसे में कमजोर तबकों में प्रशासनिक दक्षता का अभाव होना स्वाभाविक है। अनेक अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों को मालूम नहीं होता कि अपनी शक्तियों का इस्तेमाल कैसे करें। लिहाजा इन तबकों के प्रतिनिधि पंचायत में अपने फैसले स्वतंत्र ढंग से नहीं कर पाते। वे निर्णयों के लिए प्रभावशाली लोगों पर निर्भर होते हैं। ऊंची जातियों के प्रभावशाली सदस्य इस स्थिति का फायदा उठा कर उनकी शक्तियों को हड़प लेते हैं।

4. सरकारी कर्मचारियों का असहयोग: चुनाव जीत जाने के बावजूद कमजोर तबकों के प्रतिनिधियों को अपने कामकाज के संचालन में अक्सर सरकारी कर्मचारियों के असहयोग का सामना करना पड़ता है। आम तौर पर अफसरशाही इन तबकों के प्रति पूर्वग्रह से ग्रस्त होती है। सरकारी अधिकारियों को लगता है कि महिलाएं और अनुसूचित

जाति व अनुसूचित जनजाति के लोग पंचायत का कामकाज सुचारु ढंग से चलाने में असमर्थ हैं और इसलिए अफसरशाही इन तबकों के सदस्यों की कथित तौर पर उपेक्षा करती है।

पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने और उनके कामकाज में कमजोर तबकों की भागीदारी को और बढ़ाने के लिए जरूरी है कि ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद के स्तरों पर कामकाज का स्पष्ट विभाजन किया जाए। पंचायतों को अपना काम बेहतर ढंग से करने के लिए वित्तीय और प्रशासनिक स्वायत्तता दी जानी चाहिए। उन्हें विकास कार्यक्रम बनाने और लागू करने के लिए पर्याप्त वित्तीय और मानव संसाधन मुहैया कराए जाने चाहिये। केंद्र और राज्य सरकारों को पंचायती राज्य संस्थाओं में चुने गए कमजोर तबकों के अशिक्षित प्रतिनिधियों को शिक्षित करने और उनकी प्रशासनिक योग्यता बढ़ाने के लिए हर मुमकिन कदम उठाना चाहिए। इस काम में स्वयंसेवी संगठन भी सरकारी प्रयासों में बहुत मददगार साबित हो सकते हैं।

ग्राम सभाएं पंचायती राज व्यवस्था में विचार-विमर्श का सबसे महत्वपूर्ण मंच है। लेकिन देखा गया है कि इनकी बैठकों में महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों की भागीदारी बहुत कम रहती है। इसलिए ग्राम सभा की बैठकें वैसे समय की जानी चाहिए जब महिलाएं और कमजोर तबकों के सदस्य घर या रोज़गार के कामकाज में व्यस्त नहीं रहते हों। ग्राम सभा की बैठक में हिस्सा लेने के लिए समय निकालने से उन्हें अगर कोई आर्थिक नुकसान होता है तो इसकी भरपाई की व्यवस्था करना एक अच्छा कदम होगा। पंचायत कार्यालयों में साम्प्रदायिक, जातीय और आर्थिक आधार पर कमजोर तबकों के साथ किसी भी तरह के भेदभाव के खिलाफ सख्ती से निपटा जाना चाहिए। इसके साथ ही ऊंची जातियों के प्रतिनिधियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे ग्राम सभा की बैठकों में वंचित समुदायों के लोगों को अपनी बात रखने का पर्याप्त मौका दें।

पंचायती राज संस्थाओं को सौंपे गए कार्यक्रमों और विषयों से संबंधित सरकारी अधिकारियों को जनप्रतिनिधियों के साथ सहयोग की जरूरत के प्रति संवेदनशील बनाया जाना चाहिए। उन्हें बताया जाना चाहिए कि पंचायती राज संस्थाओं में उनकी भूमिका निर्वाचित प्रतिनिधियों के सहायक की है। इस मकसद से उनके लिए देश, राज्य और जिला स्तर पर प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाने की जरूरत है।

देश में पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना मौजूदा समय का सबसे बड़ा सामाजिक प्रयोग है। ये संस्थाएं अपनी तमाम ताकतों और कमजोरियों के साथ बराबरी पर आधारित एक नई सामाजिक व्यवस्था के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान कर रही हैं। इन्होंने बुनियादी स्तर तक योजनाओं और कार्यक्रमों के निर्माण और उन पर अमल के लिए मंच मुहैया कराया है। इन संस्थाओं ने समाज के सबसे नीचे के पायदान पर खड़े समुदायों में शिक्षा और प्रशासनिक दक्षता का प्रसार कर उन्हें सामूहिक कोशिशों के जरिए अपने सुनहरे भविष्य के निर्माण के लिए काम करने का आत्मविश्वास दिया है। इन संस्थाओं में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं की भागीदारी को और सार्थक बनाने की जरूरत है ताकि भारत को सही मायनों में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय पर आधारित एक ऐसे आदर्श देश में तब्दील किया जा सके जिसमें सभी नागरिकों को बराबरी के अधिकार हासिल हों। ❑

YH-893/2018